Research Article

उत्तराखंड के ऊपरी अलकनंदा बेसिन में प्रवसन के कालिक पक्ष का अध्ययन

मंजू भंडारी
भूगोल विभाग, राजकीय डिग्री कॉलेज, देहरादून शहर

सारांश

प्रवास का अर्थ किसी व्यक्ति या समूह द्वारा अपने मूल स्थान को छोड़कर किसी दूसरे स्थान पर स्थायी या अस्थायी रूप से बसना है। उत्तराखंड में यह एक गंभीर समस्या रही है, जहाँ 2001-2011 के बीच अल्मोड़ा और पौड़ी जैसे पहाड़ी जिलों में जनसंख्या में गिरावट देखी गई है । प्राचीन काल से ही बाहरी जातियाँ, तपस्वी, आर्य और राजनैतिक अशांति से बचने वाले लोग इस क्षेत्र में आकर बसे हैं। वर्तमान में भी मजदूर और व्यापारी यहाँ आते हैं। 1804-1815 के गोरखा काल में शोषण के कारण भारी बाह्य प्रवसन हुआ। वर्तमान में रोजगार, शिक्षा और सुविधाओं की कमी के कारण शिक्षित वर्ग बाहर जा रहा है, जिससे "मनीआर्डरवादी अर्थव्यवस्था" को बढ़ावा मिल रहा है। कोल, किरात, खस और द्रविड़ जैसी जातियों का आगमन हुआ। शंकराचार्य (8वीं सदी) का आगमन और विभिन्न राजपूत व ब्राह्मण जातियों का राजनैतिक व धार्मिक कारणों से बसना। गोरखा शासन में पलायन बढ़ा, जबकि ब्रिटिश काल में सैनिकों को तराई क्षेत्रों में बसाया गया। सड़क मार्ग और शिक्षा के विकास के साथ अन्तः और बाह्य दोनों प्रवासों में तीव्रता आई। तकनीकी शिक्षा की कमी, आर्थिक संसाधनों का अभाव, रोजगार के अवसरों का आकर्षण और आधारभूत सुविधाओं की कमी इस क्षेत्र से बाह्य प्रवसन के प्रमुख कारण हैं।

प्रस्तावना

प्रवास का अर्थ है किसी व्यक्ति या समूह का अपने मूल स्थान को छोड़कर किसी दूसरे स्थान पर स्थाई या अस्थाई रूप से रहने के लिए चले जाना प्रवास कहलाता है। जैसे शिक्षा, रोजगार, व्यवसाय, विवाह सुरक्षा जैसे कारणों से प्रवास होता है। साधारण शब्दों में जब कोई व्यक्ति अपने रहने के स्थान को छोड़कर कहीं दूसरे स्थान पर देश से बाहर या भीतर रहने जाता है उसे प्रवास कहते हैं।

उत्तराखंड सरकार ने राज्य में पलायन की समस्या को समझने और उसके समाधान हेतु अगस्त 2017 में ग्रामीण विकास और पलायन निवारण आयोग का गठन किया था वर्ष 2022 में इसका नाम बदलकर ग्राम विकास एवं पलायन निवारण आयोग कर दिया गया। उत्तराखंड में प्रवास एक गंभीर समस्या है। 2001 और 2011 की जनगणना की आंकड़ों का तुलनात्मक अध्ययन में राज्य की अधिकांश पर्वतीय जिलों में जनसंख्या की दशकीय वृद्धि दर अधिक धीमी रही है ल 2001 और 2011 के बीच अल्मोड़ा और पौड़ी गढ़वाल जिलों की जनसंख्या में कमी आई है जो पार्वती अंचलों से बड़े पैमाने पर प्रवास की दर में वृद्धि दर्शा रहा है। वर्तमान आंकड़े बताते हैं कि देहरादून,उधम सिंह नगर, नैनीताल,हरिद्वार जिलों में दशकीय जनसंख्या वृद्धि अधिक है। जबकि पौड़ी और अल्मोड़ा जिलों में नकारात्मक है। टिहरी,बागेश्वर, चमोली, रुद्रप्रयाग और पिथौरागढ़ जिलों में असामान्य रूप से कम है। राज्य में ग्रामीण विकास और प्रवसन आयोग का गठन राज्य में ग्रामीण क्षेत्र की लक्षित विकास के लिए एक दृष्टिकोण विकसित किया जा सके

प्रागैतिहासिक युगों से ही मानव वर्गों का प्रवसन होता रहा है। मानव प्रजातियां आदिकाल से ही अपने उदगम प्रदेश से बाहर को प्रवासित होती रही हैं। मानव प्रजातियों के प्रवास जलवायु परिवर्तनों व हिमयुगों में होते रहे हैं। सभ्यता के विकास के क्रम में नदी वेदिकाओं की ओर मानव प्रवास होता रहा है।

इसी क्रम में उत्तराखंड में भी आदिकाल में आर्यों का पदार्पण गंगा आदि नदियों के उदगम क्षेत्रों की ओर, पंजाब व गंगा के मैदानी क्षेत्रों से अन्तः प्रवसन के रूप में होता रहा फलत. यहां की आदिवासी जातियों पर आर्यों का प्रभुत्व होने से उनका राज्य स्थापित हुआ। कालान्तर में वैदिक युग, प्राचीनकाल, मुगल काल, स्थानीय शासकों के समय, गोरखाकाल, ब्रिटिशकाल, स्वातंत्रोत्तर समय में भी निरन्तर अन्तः प्रवसन की प्रक्रिया चलती आ रही है परन्तु प्रवसन का सर्वाधिक स्वरूप वर्तमान में वाह्य प्रवसन के रूप में इस क्षेत्र में देखने को मिलता है। कोई समूह या व्यक्ति अकाकरण प्रवासित नहीं होता है। फिर भी मानव में स्थानान्तरण के लिये बल प्रदान करती है। इस क्षेत्र में प्रवसन हेतु अपकेन्द्रीय शक्ति एवं अभिकेन्द्रीय शक्ति दोनों की क्रियाशील रही है।

उत्तराखंड में वर्तमान प्रवसन की प्रक्रिया बहुप्रयोजनीय रही है जब प्रवसन स्वैच्छिक होता है तो उसके पीछे आर्थिक लाभ, शिक्षा, सुरक्षा, सामाजिक प्रतिष्ठा आदि प्रयोजन प्रमुख अभिप्रेरक होते हैं। स्वतंत्र प्रवसन एकाकी एवं सामूहिक दोनों प्रकार का मिलता है, जब वह सामूहिक प्रवास का रूप ले ले लेता है तो इसका प्रभाव दोनों छोरों पर पड़ता है।

प्रारम्भ में इस क्षेत्र में अन्तः प्रवसन के कारण बस्तियों का विकास हुआ, कृषि व पशुपालन कार्य विकसित हुये एवं आत्मनिर्भरता मूलक अर्थव्यवस्था बनी तदुपरान्त तपस्वी • एवं आर्यों के आगमन, राजाओं व शासकों के काल में धार्मिकता व राजनैतिक आधार पर अन्तः प्रवसन की प्रक्रिया से क्षेत्रीय जन दबाब बढ़ा। 1790 में कुमायूं में गोरखाओं केप्रभुत्व व शासन हुआ तदुपरान्त 1804 से 1815 तक गढ़वाल के सभी क्षेत्र भी गोरखा शासन के अन्तर्गत आ गये इस काल में तीव्र वाह्य प्रवसन उत्तरांचल से हुआ जिससे क्षेत्रीय जनसंख्या में 20-30 प्रतिशत तक की कमी आ गई। 1815 के उपरान्त ब्रिटिश काल में द्वितीय विश्वयुद्ध के बहादुर सैनिकों को पुरस्कार स्वरूप भूमि प्रदान कर गढ़वाल के तराई-भावर में प्रवासित किया गया 1947 के भारत के विभाजन के उपरान्त प्रवसन एक प्रकार की भौगोलिक प्रवासित या स्थानीय प्रवासिता है, जिसमें रहने का मूल अथवा पहुंचने का स्थान, दोनों भिन्न-भिन्न होते हैं इस प्रकार का प्रवसन स्थाई होता है क्योंकि इसमें मानव का निवास स्थान स्थाई रूप से परिवर्तित हो हो जाता है।

प्रवसन के प्रकार: वेसिन में प्रवसन के निम्न दो रूप मिलते हैं।

अन्त: प्रवसन: अन्त: प्रवास के अंतर्गत प्राचीनकाल में बाहरी जातियां इस क्षेत्र में प्रवासित हुई तथा बस्तियों का वसाव प्रारम्भ हुआ। वर्तमान समय में भी बाहरी लोग इस क्षेत्र में मजदूरी, राजमिस्त्री, व्यापारी आदि कारणों से अन्तः प्रवासित होकर यहीं बस रहे हैं। जिनमें कुछ लौट भी जाते हैं। अन्तः प्रवसन की सर्वाधिक तीव्रता प्राचीनतम में प्राचीन जातियों के आगमन, आर्यों के आगमन, रजवाड़ों की स्थापना के रूप में अधिक हुई। धार्मिक कारणों से अन्तः प्रवसन की तीव्रता 700- 1600 ई0 के मध्य सर्वाधिक रही इसमें तमिलनाडु,

आन्ध्र, केरल, गुजरात, कर्नाटक, मध्य प्रदेश व राजस्थान से आये तीर्थ यात्री वापस न लौट सकने के कारण यहीं बस गये। जिन्होनें बाद में स्थानीय हिस्सेदारी व जागीरदारी प्रथा में अंश प्राप्त किया।

राजनैतिक अन्तः प्रवसन के रूप में 1200-1600 ई0 में मैदानी भाग में राजनैतिक अशान्ति के कारण व मुस्लिम शासकों के आतंक से कई राजपूत व ब्राह्मण परिवार याहां आकर बस गये जिसमें पंजाब, मध्यप्रदेश के धारानगरी, उज्जैन, मालवा तथा दक्षिण मेंकर्नाटक व पुरी से एवं गुजरात व राजस्थान से राजपूत व ब्राह्मण परिवार यहां आकर बसे इस समय 69 राजपूत व ब्राह्मण जातियां यहां आकर बसी। वर्तमान में भी मजदूर व्यापारी, नौकरी पेशा व्यक्ति यहां आकर प्रवासित होकर बस रहे हैं।

वाह्य प्रवसन: इस क्षेत्र में वृहद वाह्य प्रवसन का समय 1804 1815 ई० का रहा जब गोरखाली आक्रमण व शोषण से वाह्य प्रवसन तीव्रतर हुआ। ब्रिटिश काल में 1815-1947 की अवधि में अन्तः प्रवसन की गति कम रही तथा बाह्य प्रवसन भी सामान्य रहा इस समय द्वितीय विश्वयुद्ध में भाग लेने वाले सैनिकों को तराई-भावर क्षेत्रों में पुरस्कार स्वरूप भूमि प्रदान कर बसाया गया। स्वतंत्रता उपरान्त वाह्य प्रवसन में तीव्रता आई तथा अन्त प्रवसन से व्यापारी, नौकरी पेशा, व मजदूरों के आने से क्षेत्रीय सांस्कृतिक विभिन्नतायें जन्म लेने लगी।

वर्तमान में भी रोजगार, आर्थिक कारणों, आधारभूत सुविधाओं की कमी, व्यावसायिक शिक्षा की कमी, बाहरी क्षेत्रों के आकर्षण आदि कारणों से जनसंख्या का शिक्षित वर्ग, बौद्धिक वर्ग तीव्रता से बाहरी क्षेत्रों की ओर प्रवासित हो रहा है। जिससे क्षेत्रीय समाज खोखला हो रहा है तथा मनीआर्डरवादी अर्थव्यवस्था भी बाजार कंन्द्रित आत्मनिर्भरता को जन्म देकर क्षेत्रीय विकस को अवरूद्ध कर रही है। उत्तरांचल राज्य बनने के बाद भी कमोवेश यही स्थिति है।

अन्तः प्रवसन का कालिक पक्ष: इस क्षेत्र में अन्तः प्रवसन की प्रक्रिया प्राचीन काल से वर्तमान समय में विभिन्न स्वरूपों एवं उद्देश्य से निरन्तर बनी मिलती है जिसमें निम्न समय मुख्य है।

प्राचीन जातियों का आगमन

किंवदन्ती है कि सप्तऋषियों ने जल प्रलय के बाद विष्णुगगा अपवाह क्षेत्र के माणा (बदरीनाथ) स्थान में प्राण रक्षा की तथा पुनः सृष्टि रचना में लगगये। इन्हीं सप्तऋषियों मरीचि, अंगीरा, अत्री, अगस्त्य, भृगु, वशिष्ठ एवं मनु से उनके वंशचले। प्राचीन षड़दर्शन के प्रवर्तकों में से चार ने इसी वेसिन में अपने मतों का प्रतिपादनकिया। जिसमें गौतम ऋषि ने मन्दाकिनी तट पर व्यास एवं जैमिनी ने सरस्वती नदी केतट पर कपिलमुनी ने बररिकाश्रम को अपने मतों के प्रतिपादन स्थल के रूप में चुना था।

प्राचीन काल में इस क्षेत्र में आदिवासी कौल, यक्ष, भील, आदि निवास करती थी।स्कन्ध पुराण के अनुसार श्रीनगर कोलासुर की राजधानी थी। कोलासुर कोल जाति सेसम्बन्धित था जो इस क्षेत्र में भी राज्य करता था। कोल आदि उपरोक्त जातियों केबाद आखेटक जाति किन्नर, गन्धर्व, किरात ने यहां घुसकर कोल व मुण्ड जातियों कोआत्मसात कर लिया था। किरात जाति का सम्बन्ध इस क्षेत्र से लम्बे समय तक रहा।ऋग्वेदिक काल में भागीरथी नदी का नाम किराती था। किरात जाति को कृषि कीजानकारी थी यह मंगोलाइड जनजाति थी जो पूर्व से इस क्षेत्र में आखेट व पशुचारणहेतु प्रविष्ट हुई। इनके कुल देवताओं में रूद्र, भेरव, घंटाकरण थे।

(वैदिक आर्यों को भीकिरातों के रूद्र ने आतंकित किया था। फलस्वरूप आर्यों ने इनके रूद्र को अपनेउपास्यों में स्थान दिया था। पर्वत शिखरों, निर्जन घाटियों एवं बीहड़ वनों में ईश्वरीयकव्यना के श्रेय इसी जाति को है किरात जाति के अवशेष ही राहुल के अनुसार भोटियाजनजाति है। किरात जाति के बाद इस क्षेत्र में खस जाति का आगमन हुआ सिने किरातको हिमालय के उच्च भागों में धकेल दिया हिमालय को देव रूप में मानने का श्रेय इसीखस जाति को है यह जाति पशुचारण व कृषि कार्य करती थी। गंगोत्री, बदरीनाथ,केदारनाथ आदि प्राकृतिक स्थल विकसित किये।

खस जाति के द्रविड़ जाति ने प्रवेश किया तथा मन्दिर व मूर्ति निर्माण प्रारम्भकिया। कोल भिण्ड किरात द्रविड जातियों की उपरोक्त धार्मिक मान्यतायें व मान्यताओं केकारण धार्मिक मान्यताओं का प्रचलन प्रारम्भ हो गया था।

तपस्वियों का आगमन

सभी पुराण यह स्वीकार करते हैं कि वैदिक धर्म के प्रवर्तक ब्रहमा कास्थान राजस्थान का पुष्कर तीर्थ है। उनके एक पुत्र का नाम धर्म था जिनकी पत्नी मूर्तिसे 'नारायण' एवं पूर्व पत्नी से 'नर' नामक पुत्र उत्पन्न हुये। दोनों पत्नियों दक्ष प्रजापतिकी पुत्रिया थी। नर-नारायण न इस बेसिन के आटामान उप बेसिन क्षेत्र में आदींबदी स्थान पर तप किया जिसमें उर्वशी द्वारा विघ्न डालने पर ये तपस्वी योगबदरी व ध्यान बदरी होकर बदरीकाश्रम तपस्या करने लगे। शंकर दिग्विजय के अनुसार शंकराचार्य ग्यारह वर्ष की आयु में बदरीकाश्रम आये यहा सोलह भाषा लिखे तथा जोशीमठ में तप करके 788-820 ई० में ज्योर्तिमठ की स्थापना की थी।

बदरीकाश्रम जी की यात्रा वैदिक काल में 1000-2400 ई० पूर्व ही प्रारम्भ हो चुकी श्री तथा यह क्षेत्र ज्ञान, ध्यान का उत्तम केन्द्र बन चुका था। व्यास मुनि के सुझाव पर पाण्डव अपने प्रयाग हेतु इस क्षेत्र में आये। नरनारायण ऋषियों की तपस्थली कृतयुग के प्रारम्भ में बनी थी जिसे उस समय मुक्ति प्रदान करने वाला, द्वापर में विशाला तथा कलयुग में बदरीकाश्रम कहा जाने लगा।

आर्यों का आगमन: इस वेसिन में आर्यों का आगमन 3000 बी०सी० से पूर्व माना जाता है। इस समय निम्न प्रमुख प्रवास हुये।

बाहमिक युग में: इस समय सजऋषि ब्राहमण, तपस्वी आदि ज्ञान हेतु इस क्षेत्र में आये। जिससे इस क्षेत्र को इस समय ब्रहमऋषि देश कहा जाने लगा। इस समय आर्यों ने पंजाब क्षेत्र से इस क्षेत्र की ओर बढ़ना प्रारम्भ कर दिया था। इस समय जाति कुल गोत्र का स्वरूप भी जन्म ले चुका था इसी समय 24 ऋषियों पर आधारित गोत्र का विकास हुआ।

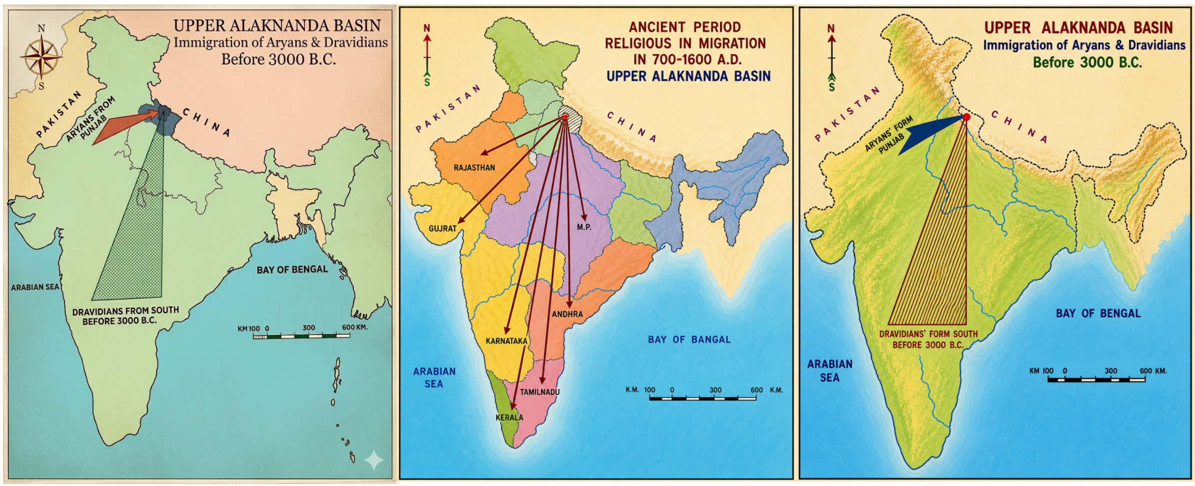

इपिक युग: आर्यों ने यहां आकर आदिवासी जातियों पर विजय प्राप्त कर पंचाला राज्य नाम से शासन किया। यह समय वैदिक युग के अन्त अर्थात 2500 वी०सी० के आसपास का माना जाता है। पंचाला राज्य के साथ ही यह क्षेत्र देवभूमि कहलाने लगा, परन्तु कुरुक्षेत्र युद्ध (1600-1200 वी0सी0) के कारण पंचाला राज्य दो हिस्सों में बंट गया जिसमें उत्तरी भाग द्रोणाचार्य द्वारा दुपद से छीन कर कौरवों को दिया गया तथा दक्षिणी भाग दुपद के पास ही रहा। उत्तरी पंचाला में ही यह वेसिन भी स्थित था। कालान्तर में आयों ने आदिवासियों से विवाह सम्बन्ध भी बनाये जिससे सभ्य आदिवासी आर्यों से मिश्रित होने लगे कुरुक्षेत्र युद्ध के बाद यहां की पुरानी आर्य जाति व शासकों का अन्त हो गया तथा नई जातियां इस क्षेत्र में आती गई।

बुद्धिस्टिक युग: इस समय इस बेसिन के उत्तरी भाग में किरात र तगण जातियों का शासन हुआ। उस समय यह पूरा क्षेत्र टेंगनोई नाम से जाना जाता था कुरुक्षेत्र युद्ध के बाद पाण्डव यहां तब तक राज्य करते रहे जब तक कि वे कैलाश को नहीं चले गये।

बौद्ध धर्म का प्रभाव: 260 वी०सी० में बन्द्रगुप्त के पुत्र अशोक ने यहां भी बौद्ध धर्म का प्रचार किया जिसके प्रभाव से ही बदरीकाश्रम को बदरीनाथ कहा जाने लगा पिण्डर बेसिन की बौद्धायन पट्टी, प्रभाव की स्मृतियां हैं बाद में इस क्षेत्र में बौद्धधर्म की समाप्ति पर शिव और विष्णु से सम्बन्धित स्थल तीर्थों के रूप में उभरने लगे।

जब अशोक ने ऊपरी दूरस्थ क्षेत्रों से सेना वापस बुलानी प्रारम्भ की ती उत्तरी-पश्चिमी क्षेत्र से विदेशी जातियां घुसने लगी तदुपरान्त छोटे-छोटे रजवाड़े बनने लगे। इसी समय यवन भी ज्योतिषियों के रूप में ओत रहे उनकी कन्या इस वेसिन में जोशीमठ व पाण्डुकेश्वर तथा तुगनाथ मन्दिरों की नक्काशी में मिलती है कहा जाता है कि ये यवन यहां 150 वी0सी0 से 450 ऐ०डी० तक यहां रहे।

लगभग 126 बी0सी0 में स्याई धियान जाति हिमालयी दरों से यहां प्रविष्ट हुई जिन्हें यहां शक कहा गया। विद्वानों के अनुसार स्थायीधियांग व राजपूत जातियों के मिश्रण से ही 'खसिया' जाति यहां जन्मी है। चन्द्रगुप्त ने अनेक नागवंशी राजाओं से युद्ध किये थे लेकिन बाद में इन्हीं नागकुल में जन्मी कुबेर नागा नागवंश व गुप्तवंश मिल गये।

 ISSN: 3108-2130 (Online)

स्थानीय शासकों के समय

स्थानीय शासकों ने सोनपाल उत्तर पश्चिमी गढ़वाल में शासन करता था तथा उत्तर पूर्वी भाग के इस वेसिन में कत्यूरी शासकों का राज्य था। इस समय दक्षिणी गढ़वाल मोरध्वज, पाण्डुवाला एवं ब्रह्मपुरा राज्यों के अन्तर्गत था। पाण्डुवाला एवं ब्रह्मपुरा राज्यों के अन्तर्गत था। सम्वत 756 में मालवा के चन्द्रवंशीय परिवार से राजा कनकपाल जब यहां आये तो राजा सोनपाल ने अपनी पुत्री की शादी व आधा राज्य कनकपाल को दे दिया। बाद में धीरे-धीरे कनकपाल ने छोटे राज्यों को भी मिला लिया तथा गढ़वाल को अपने अधिकार में कर राजधानी श्रीनगर बनाई थी। इस अवधि में निम्न प्रमुख जातियों का अन्तःप्रवसन इस क्षेत्र में हुआ।

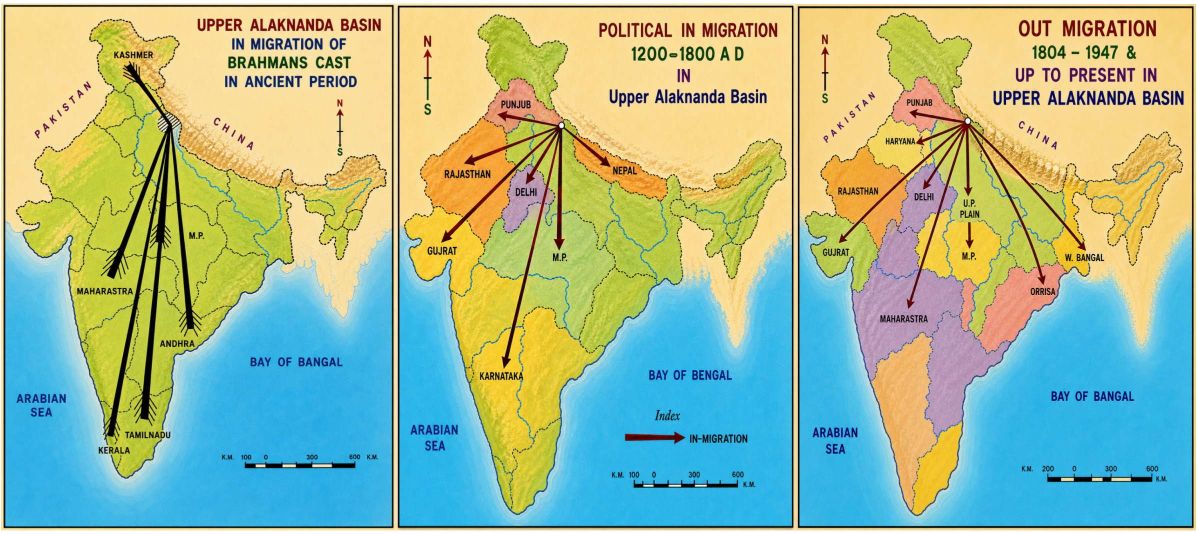

बाह्मण जातियों का आगमन

स्थानीय शासकों के राज्यावधियों के अन्तर्गत ब्राह्मण जातियां मध्यप्रदेश, गौड़ क्षेत्र, कश्मीर, दविण, केरल, तमिलनाडु क्षेत्रों से यहां अधिक प्रविष्ट हुई हालांकि ये जातियां ब्राहमिक युग से ही आती रही थी परन्तु इस समय सर्वाधिक आई। कनकपाल राजघराने ने ही ब्राहमणों के दो वर्ग सिरोला व गंगाडी बनाये। अधिकांश बाहरी ब्राहमण जातियां याला एवं धार्मिकता के कारण यहीं बस गई। इसी परिप्रेक्ष्य में बदरीनाथ जी के रावल को आज भी केरल से शंकराचार्य जी द्वारा नम्बूदरी परिवार से मनोनीत किया जाता है।

राजपूत जातियों का आगमन

पुराणों के अनुसार राजपूत इस क्षेत्र में आने वाली नई जातियां रही है। ये राजपूत जातियां राजा कनकपाल के समय तक भारी मात्रा में आईं तथा उसक बाद भी इस क्षेत्र में आती रही है। जो उत्तराखण्ड में प्रविष्ट होकर पुनः उत्तराखण्ड में इधर-उधर गढ़वाल कुमायू में बसती रही है।

विभिन्न शासकों के समय प्रवसन का स्वरूप

नागवंश (तीसरी शदी) इसका शासन क्षेत्र मन्दाकिनी व अलकनन्दा नदियों का मध्यवर्ती भाग रहा इसी समय विरसा के नागराजा गणपति नाग ने गोपेश्वर का मन्दिर बनवाया जिसे उसा समय रूद्र महालय कहा जाता था। इस समय बाहरी जातियों का धार्मिक प्रवसन ही हुआ।

गुप्त राजवंश (375-407 ई.) इस अवधि के दौरान, धार्मिक उपदेशों और तीर्थस्थलों के विकास ने आंतरिक प्रवास को मजबूत किया। इस समय गढ़वाल-कुमाऊँ पर चन्द्रगुप्त द्वितीय का शासन था। उसका प्रतीक चिन्ह गरूड़ था तथा इस समय शिखर वाले मन्दिर बने। हूण देश तिब्बत के आक्रमणों से यहां की सभ्यता व संस्कृति को हानि पहुंची तदुपरान्त कहीं हूण जातियां यहां बस गई। इस समय स्थायी बस्तियों के साथ-साथ धर्मोपदेशक व पुजारियों के निवास स्वच्छ व मठ बनने से अन्तः प्रवसन भी बढ़ा।

खस: (700-850ई०) इनकी राजधानी कार्तिकेयपुर (जोशीमठ) की टकणपुर (पीपलकोटी) प्रशासनिक केन्द्र था तथा इस कनकपाल का शासन चादपुर क्षेत्र में था।

कत्यूरी (850-1300 ई0) सातवी से तेरहवी सदी तक कत्यूरी शासन रहा वेसिन में इनकी राजधानी कार्तिकेयपुर (जोशीमठ) थी। बाद में गढ़वाल के उत्तरी सीमा के खसिया सरदारों का राज्य जीतकर कत्यूरियों ने कार्तिकेयपुर राज्य में मिला दिया। तदुपरान्त चांदपुर के राजा ने खसिया व अन्य सभी राजपूत राजाओं को साथ लेकर कत्यूरों पर आक्रमण किया फलतः कत्यूरी हार कर कुमायूं चले गये जहां वैजनाथ को राजधानी बनाया।

मुगल आक्रमण गढ़वाल से कत्यूरी साम्राज्य के अन्त के समय मुहमद तुगलक दिल्ली के सुल्तान का आक्रमण कुमायूं में हुआ इस मुगल आक्रमणों के भय से कई परिवार यहां आकर बस गये तथा मुसलमानों के प्रभाव से कई आदिवासी जातियां भी मुसलमान बनी।

पंवार वंश (1415-1804) कनकपाल के बाद गढ़वाल राज्य के संस्थापक राजा अजयपाल के शासन के अन्तर्गत यह पूरा बेसिन भी सम्मिलित था। अजयपाल की मृत्यु के बाद उनके वंशज 1804 तक राज्य करते रहे पंवार वंशी राज्य काल में बाहरी मैदानी क्षेत्र से अनेक राजपूत जातियों एवं जातियों का अन्तः प्रवसन हुआ।

रूहेलों का आक्रमण 1742 एवं 1772 ई0 के आसपास इस क्षेत्र में रूहेलों के आक्रण से मन्दाकिनी उप देसिन में ऊखीमठ-गुप्तकाशी तक लूटपाट व तबाही हुई।

गोरखा काल (1804-1815) में इस समय कूमायूं में 1790 में गोरखा शासन स्थापित हो गया था। तदुपरान्त 1804 में गोरखाओं ने गढ़वाल पर आक्रमण कर इस बेसिन को भी अपने राज्य में मिला लिया तदुपरान्त सम्पूर्ण गढ़वाल में ही गोरखा शासन हो गया। इनकी शोषण की नीति के परिणामस्वरूप इस समय वाह्य प्रवसन ही अधिक हुआ।

ब्रिटिश काल में (1815-1947) गढ़वाल के शासकों ने गोरखाओं को भगाने 6. हेतु ब्रिटिश सरकार से मदद मांगी तथा बदले में आधा राज्य जनपद गढ़वाल अंग्रेजों को दे दिया जिसमें यह देसिन भी सम्मिलित था। तब से हमें ब्रिटिश गढ़वाल कहा जाने लगा इस समय प्रशासनिक कार्यों के कारण अत्यधिक अन्त प्रवसन हुआ। ऊपरी अलकनन्दा के इस बेसिन का प्रशासनिक केन्द्र 1840 तक अल्मोडा ही रहा, बाद में गैरसैण को तहसील बनाया गया तदुपरान्त 1844 में गैरसैंण के स्थान पर चमोली को तहसील बनाया गया। अग्रेजों ने शोषण की नीति के फलस्वरूप यातायात मार्गों का शिकस नदी घाटी क्षेत्रों के अनुरूप किया फलतः अन्तः प्रवसन को भी तीव्र गति मिली।

स्वतंत्रयोत्तर समय (1947 से अब तक) स्वतंत्रता के उपरान्त यातायात शैक्षिक, प्रशासनिक, आर्थिक, सांस्कृतिक आदि गतिविधियां के बढ़ने से अन्त प्रवास को सर्वाधिक बल मिला। 1947 में कर्णप्रयाग तक, 1950 में चमोली तक, 1960 में जोशीमठ तक पहली बस पहुंचते ही अन्तः प्रवास भी तीव्रतर होता गया। 1965 में पिण्डर घाटी क्षेत्र में बस पहुंची। स्थानीय तकनीक को प्रोत्साहन न मिलने से बाहरी श्रमिक मिस्त्री, तकनीकी व्यक्ति व्यापारी वर्ग निरन्तर अन्तः प्रवासित हो रहे हैं।

उत्तरांचल राज्य निर्माण का प्रभाव: वर्ष 2000 के नवम्बर में उत्तरांचल राज्य का निर्माण हुआ तबसे अब तक विकासात्मक गतिविधियां अधिक नहीं बढ़ी है फलत. पूर्ववर्ती व्यवसाय के अनुरूप ही व्यापारिक, आर्थिक, श्रमिको, मजदूरों आदि के रूप में अन्तः प्रवसन जारी है।

वाह्य प्रवसन का कालिक पक्ष

प्राचीन ऐतिहासिक काल में वाह्य प्रवसन

प्राचीन पूर्व वैदिक काल, वैदिक काल, मध्यकाल में इस क्षेत्र में बाहरी जातियों के आने से अन्तः प्रवसन ही अधिक सक्रिय रहा। परन्तु गढ़वाल के शासकों के समय राजसत्ता में प्रशासनिक आधार पर वाह्य प्रवसन कम ही हुआ केवल प्राचीन रजवाड़े के व्यक्ति अपनी हार के कारण बाहर प्रवाहित हुए। इसी तरह कनकपाल ने इस क्षेत्र में एक क्षेत्र एक राज्य स्थापित करने हेतु कत्यूरियों को हरा कर कुमायूं क्षेत्रके लिये वाह्य प्रवासित किया। इस समय उपजाऊ जमीन के कारण तराई क्षेत्रों में भी बसने हेतु प्रलोभन दिया जाता था।

गोरखाकाल में (1804-1815) तक का समय गोरखाली शासन के अन्तर्गत इनकी शोषण, मारकाट की नीति के कारण अत्यधिक भयावह होने से इस समय सर्वाधिक बाह्य प्रवसन इस क्षेत्र में हुआ। इस समय गढ़वाल में तीस हजार लोगों टेक्स न देने के कारण 'दास' के रूप में कार्य हेतु खरीदा गया तथा अस्सी हजार व्याक्तियों को 1811-1821 की अवधि में मैदानी भागों में नीलाम किया गया।

ब्रिटिश काल (1815-1947) इस समय द्वितीय विश्वयुद्ध में भाग लेकर लौटे सैनिकों को वीरता स्वरूप पुरस्कार के रूप में तराई-भावर क्षेत्रों में बसाया गया। आत्चारिक वेसिन क्षेत्रों से सेना में भर्ती होने, रोजगार व शिक्षा प्राप्ति हेतु गांवों से बाह्य प्रवसन को गति मिली।

स्वतंत्रत भारत में (1947 से अब तक) स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त इस क्षेत्र की विकास गतिविधियां जहा तीव्रत्तर हुई उसी के साथ-साथ बाहरी व्याक्तियों में आकर्षण, रोजगार प्राप्ति, रहन सहन के स्तर, आधारभूत सुविधाओं की सुविधा आदि कारणों से वाह्य प्रवसन अधिक होता गया। इसमें रोजगार की प्राप्ति मुख्य कारण रही है जिसके कारण आज यह क्षेत्र मनीआर्डरवादी अर्थव्यवस्था के कारण बाजार केन्द्रितआत्मनिर्भरता को अपनाने से खोखला हो गया है।

उत्तरांचल राज्य स्थापना के बाद: 09 नवम्बर 2000 को उत्तरांचल राज्य स्थापित हो गया परन्तु अभी सीमांत क्षेत्रों में इस क्षेत्र में रोजगार के साधनों का अभाव बना है। फलतः पलायन की वही पूर्व प्रवृत्ति बनी है। राजधानी देहरादून होने से भी इस वेसिन से अधिकांश बौद्धिक वर्ग स्थाई रूप से देहरादून बसने लगा है जिससे वाह्य प्रवसन की गति इस क्षेत्र में बढ़ी है। सरकार की पलायन संबंधी योजनाओं का प्रभाव उत्तराखंड

में देखने का मिलता है। वर्तमान (2025-26) प्रवास की प्रवृत्ति पारंपरिक पलायन से हटकर रिवर्स माइग्रेशनश् (वापसी) की ओर झुक रही है। राज्य के पर्वतीय ग्रामों में, विशेषकर युवाओं (25-35 आयु वर्ग) द्वारा रिवर्स पलायन और कृषि, होमस्टे जैसे स्वरोजगार के अवसरों के कारण, अगस्त 2025 तक 6,282 से अधिक लोग अपने गांवों में लौटे हैं, जो एक सकारात्मक बदलाव है।

इस क्षेत्र में वाह्य प्रवसन हेतु आज भी निम्न कारण उत्तरदायी रहे हैं - तकनीकी ज्ञान एवं शिक्षा हेतु वाह्य प्रवसन। आर्थिक संसाधनों की कमी से। रोजगार की अधिक सुविधाओं का आकर्षण। इस क्षेत्र में आधारभूत सुविधओं की कमी से। उत्पादकता की कमी व श्रम साध्य जीविका से वाह्य प्रवसन। क्षेत्रीय आत्मनिर्भरता की कमी से वाह्य प्रवसन। बाहरी क्षेत्रों का आकर्षण । नौकरी में कम श्रम से ही अधिक मुद्रा की प्राप्ति का आकर्षण। जीविकापार्जन हेतु वाह्य प्रवसन। सेवा उपरान्त जन उपयोगी सुविधाओं के आकर्षण से आदि।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

नन्द व कुमार दि होली हिमालया 1989

डबराल शिवप्रसाद - उत्तराखण्ड का इतिहास भाग- एक 1965

पातीराम रायबहादुर गढ़वाल एनसियेन्ट एण्ड मार्डन 1916

डबराल उत्तराखण्ड का इतिहास भाग - सात

शालीग्राम वैष्णव 'उत्तराखण्ड रहस्य 1926

डबराल, उत्तराखण्ड का इतिहास भाग-सात 1965

Blaker. C.P. (1948) Stages in population growth, Eugenies review Vol. 40

Brunhes, J. (1932,1952) Human Geography.

Bhandari, D.S. (2000) Mandakini Basin A Study of Integrated watershed Management for Sustainable Development unpublished thesis Garhwal University, Srinagar (Garhwal).

Dabral. S.P. (1965) Uttarakhand Ka Itihas volume one and Volume Seven

Dube. K.N. (1981) Regional Disparities in levels of Socio- Economic Development in Uttar Pradesh. An unpublished thesis, Punjab Univ. Chandigarh.

Dancekar. H. (1952) Method in Social Research Mcgraw Hill New York.

Huxley (1870) Geographical distribution of mankind, Journal of the Ethnological society, London.

Kharkwal (1996) Regional Geography Himalaya.

Kharkwal, S.C. (1990) Land and Habitat: A Cultural Geography.

Kaushik, S.D. (1962)" Agriculture in Himalaya N.G.S.I. Journal of India Varanasi VIII Vol.

Kharkwal, S.C. (1993) Physio- cultural Environment and development in U.P. Himalaya.

Kaushik (1997) Human Geography Rastogi Publication Meerut.

Kaushik (1962) Agriculture in Himalaya.

Mishra, R.R. (1972) Growth pole and Growth Centre in Contact of India's Urban and Regional Development.

प्रकाश पुरोहित (2001) उत्तरांचल स्वप्निल पर्वत प्रदेश।

P.B. Yang (1960) Scientific Social Survey & Research Asia Publishing House Bombay. Raibahadur Patiram (1916) Garhwal ancient and Modem. Shaligram Bashnav (1926) उत्तराखण्ड रहस्य।

Srivastava & Sharma (1997) Regional Planning and Balanced Development. श्रीवास्तव एवं राव' पर्यावरण व पारिस्थितिकी बसुन्धरा प्रकाशन गोरखपुर।

Sharma, M.I. (1985) Micro Level Planning- A case Study of Tarabganj Tehsil of district Gonda. An unpublished thesis Awadh Uni. Faizabad, Singh, H.P. (1979)" Resource Appraisal and Planning in India". Taylor G. (1949) Environment, Race and Migration. Wadia, D.N. (1963) Geology of India.

Yonekura Tiro (1961) Comparative Study of East Asian and Indian Villages Geographical Review of India.